M .A 1st semester
राज्य की उतपति के सम्बंध में कौटिल्य के विचार।

द्वारा

अंजनी कुमार घोष

राज्य की उत्पत्ति (Origin of state) कौटिल्य

कौटिल्य के अनुसार सृष्टि के प्रारंभ में मनुष्य प्राकृतिक अवस्था में रहता था। हॉब्स के समान कौटिल्य उस प्राकृतिक अवस्था को राज्यविहीन, कानून विहीन तथा अनैतिकतापूर्ण मानता है। पूर्व काल में एक समय ऐसा भी था, जब मत्स्य न्याय का प्रचलन था। जिस प्रकार बड़ी मछली छोटी मछली को निरंतर अपना आहार बना लेती है, उसी प्रकार उस युग में सबल मनुष्य निर्बल मनुष्यों को निरंतर नष्ट करते रहते हैं। अराजकता की स्थिति से तंग आकर मनुष्यों ने विवस्वान के पुत्र मनु को अपना राजा शिकार किया। मनु और प्रजा के बीच एक समझौता किया गया, जिसके अनुसार राजा को राज्य शासन चलाने हेतु अन्य की उपज का छठवां भाग, व्यापार द्वारा प्राप्त धन का दसवां भाग और हिरण्य की आय का कुछ भाग कर के रूप में देने का निर्णय किया। साथ में, यह भी स्पष्ट कर दिया गया कि कर से प्राप्त धन का अधिकारी वही राजा होगा, जो अपनी प्रजा को धन-धान्य से सुखी रखेगा तथा उसकी बाधाओं एवं शत्रु आक्रमण से रक्षा करेगा। इस प्रकार यह समझौता एक द्विपक्षीय था, जिससे राजा और प्रजा दोनों बंधे हुए थे। दोनों राजा और प्रजा एक दूसरे के प्रति कर्तव्य निभाने को बाध्य थे। यदि राजा अपने कर्तव्य से विमुख होगा, वह कौटिल्य के अनुसार प्रजा पर अपने अधिकार से वंचित होगा। प्रजा उसकी धन-धान्य से सहायता करना बंद कर देगी तथा वह उनका राजा नहीं रहेगा।
इस प्रकार कौटिल्य एक साथ ही राजा और राज्य की उत्पत्ति के सिद्धांत का प्रतिपादन करते हैं। राजा ने अराजकता को समाप्त करके राज्य व्यवस्था का श्रीगणेश किया। कौटिल्य भीष्म की इस बात को भी मान्यता देता है कि जब मनुष्य में आसुरी प्रवृतियां प्रबल हो जाते हैं, तब प्राकृतिक अवस्था का जन्म होता है। कौटिल्य का राज्य की उत्पत्ति का सिद्धांत के हॉब्स से मिलता जुलता है, पर उसमें एक नवीनता पाई जाती है। कौटिल्य का मत है कि राजा को पूर्व अनुमति के बिना कर लगाने का, उसे संचय करने का तथा व्यय करने का कोई अधिकार नहीं है। कौटिल्य लोक वित्त पर प्रजा का अधिकार मानता है, राजा का नहीं। कौटिल्य का यह विचार उसे आज के प्रजातांत्रिक राज्य के बहुत नजदीक ले आता है।

राज्य के उद्देश्य

राज्य की तीन मुख्य उद्देश्य निर्धारित किए गए- (1) आंतरिक शांति एवं सुरक्षा स्थापित करना,
(2) राज्य की बाहरी शत्रुओं से रक्षा करना,
(3) प्रजा की सुख समृद्धि के लिए कल्याणकारी कार्यों की व्यवस्था करना।
उपर्युक्त तीनों उद्देश्य वास्तव में एक ही उद्देश्य के तीन खंड हैं और मुख्य उद्देश्य प्रजा का हित, उसकी सुरक्षा एवं समृद्धि करना है। कौटिल्य का कहना है कि प्रजा सुखी हीं राजा का सुख है। कौटिल्य राजा और राज्य में कोई भेद नहीं करता है। वह राजा और राज्य को एक दूसरे का पर्यायवाची मानता है।

राज्य के कार्य

कौटिल्य की अमूल्य ग्रंथ अर्थशास्त्र के अंतर्गत राज्य के कार्यों में राज्य विस्तार को सर्वप्रथम स्थान दिया गया है। इसके अतिरिक्त राज्य को अपने क्षेत्रों में शांति एवं सुरक्षा स्थापित करने के साथ-साथ प्रजा हित में महत्वपूर्ण सामाजिक आर्थिक एवं न्यायिक कृत्य भी करने आवश्यक होते हैं। संक्षेप में कौटिल्य के अनुसार राज्य के कार्यों का विवरण इस प्रकार है –

(1) राज्य विस्तार : आचार्य कौटिल्य राज्य को एक जीवित सावयव (Living order) मानते हैं। जिस प्रकार एक सचिव सावयव का क्रमशः विकास होता है, उसी प्रकार राज्य का भी और उसके अंग का भी क्रमिक विकास होते रहना, उसके अस्तित्व के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। अतः राज्य के विकास हेतु कौटिल्य ने राज्य का यथासंभव विस्तार करते रहने का औचित्य रखा है। युद्ध विजय द्वारा राज्य विस्तार किये जाने की दशा में, पराजित राजा की सेना तथा उसकी प्रजा के साथ कैसा व्यवहार किया जाए, इसका भी कौटिल्य ने उल्लेख किया है।

(2) राज्य में शांति एवं शुव्यवस्था की स्थापना : राज्य की स्थापना प्रारंभिक काल से ही शांति एवं शुव्यवस्था की स्थापना के लिए हुई है। आचार्य कौटिल्य ने इस कार्य को प्रधानता देते हुए यह स्पष्ट उल्लेख किया है कि राज्य के अंतर्गत अराजकता एवं अव्यवस्था को रोकने के लिए राजा को समाज में शांति एवं शुव्यवस्था स्थापित करनी चाहिए। इस शांति एवं व्यवस्था की स्थापना के लिए कौटिल्य ने कहा कि सेना व कुशल गुप्तचर विभाग की ही सहायता से राज्य में राज्यद्रोहिओं एवं अन्य अपराधियों का पता लगाकर उन्हें दंडित किया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त इस बात का पता लगाना भी गुप्तचर व्यवस्था का एक अनिवार्य कार्य होना चाहिए कि राज्य की नीतियों की वजह समर्थक है, अथवा नहीं और उनका प्रजा पर क्या प्रभाव है। यहां तक कि राज्य में कौन गरीब है, और कौन दुखी, इस बात का पता लगाना भी गुप्तचरों का कार्य है।
राज्य एवं उसकी प्रजा की सुरक्षा : राज्य को स्थाई रखने के लिए कौटिल्य ने राज्य के क्षेत्र को एक प्रभुसत्ता की अधीनता में सुरक्षित रखने की आवश्यकता पर बल दिया है। सैनिक संगठित करने और साथ ही साथ दाम, दंड एवं भेद की नीतियों का अनुसरण करते हुए राज्य में दुर्ग और पुलों का निर्माण एवं सैनिक शक्ति का निरंतर विकास करने से राज्य अपने ऊपर बाहरी आक्रमण के फलस्वरुप अचानक आए हुए संकट का सरलतापूर्वक सामना कर सकता है, और समय उपयुक्त होने पर अपनी विस्तारवादी नीतियों को भी क्रियान्वित कर सकता है।

(3) राज्य एवं उसकी प्रजा की सुरक्षा : राज्य को स्थाई रखने के लिए कौटिल्य ने राज्य के क्षेत्र को एक प्रभुसत्ता की अधीनता में सुरक्षित रखने की आवश्यकता पर बल दिया है। सैनिक संगठित करने और साथ ही साथ दाम, दंड एवं भेद की नीतियों का अनुसरण करते हुए राज्य में दुर्ग और पुलों का निर्माण एवं सैनिक शक्ति का निरंतर विकास करने से राज्य अपने ऊपर बाहरी आक्रमण के फलस्वरुप अचानक आए हुए संकट का सरलतापूर्वक सामना कर सकता है, और समय उपयुक्त होने पर अपनी विस्तारवादी नीतियों को भी क्रियान्वित कर सकता है। कौटिल्य ने जनता की सुरक्षा और संरक्षण में ही राज्य की रक्षा और अस्तित्व को संभव बताया है। राज्य अथवा उसके शासक वर्ग का यह प्रथम कर्तव्य है कि राज्य के उन कर्मचारियों का दमन करें जो कि प्रजा के लोगों से रिश्वत आदि लेकर उनका शोषण करते हैं। राज्य के साहूकारों और व्यापारियों पर भी सतर्क दृष्टि एवं नियंत्रण रखा जाना चाहिए, ताकि वे न तो सूद और मुनाफे के नाम पर जनता से अधिक धन लूट सके और न ही उनका किसी भी प्रकार से शोषण कर पायें। कौटिल्य का मत है कि ऐसा करने से प्रजा की राज्य के प्रति आस्था बढ़ेगी और देश के कोने कोने में शांति और व्यवस्था भी बनी रहेगी।

(4) राज्य के आर्थिक कार्य : राज्य के सुचारु रुप से संचालन के लिए राज्य के पास धन होना भी आवश्यक है। किसी भी राज्य की उन्नति तभी संभव है जब उसकी आर्थिक स्थिति अच्छी हो। सभी प्रकार से राज्य को प्रभूत एवं सुख संपन्न बनाने के लिए राज्य में कृषि व्यवस्था एवं उद्योग धंधों का विकास किया जाना चाहिए, तथा इस दृष्टिकोण से राज्य को अपने विभागाध्यक्षों की नियुक्ति करके उसके माध्यम से कृषि व्यवसाय पशुपालन तथा औद्योगिक संस्थानों के नियंत्रण एवं विकास में दक्षित रहना चाहिए। राष्ट्रीय व्यापार के विकास हेतु राज्य में देशी एवं विदेशी व्यापार का संतुलन रखना भी कौटिल्य ने आवश्यक माना है। लोक कल्याण के हित में राज्य लोगों की व्यक्तिगत कार्यों में भी हस्तक्षेप करके उन्हें सीमित कर सकता है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि राज्य प्रशासन के क्षेत्र में कौटिल्य व्यक्तिवाद का समर्थक नहीं है।

(5) (5) राज्य के सामाजिक एवं सांस्कृतिक कार्य : आचार्य कौटिल्य व्यक्ति के विकास के लिए राज्य को ही उत्तरदाई ठहराते हैं। उनका यह विश्वास रहा है कि मानव एक सामाजिक प्राणी है और वह अपनी उन्नति एवं विकास के लिए समाज पर निर्भर रहता है। अतः कौटिल्य ने एक स्थान पर यह स्पष्ट किया है कि समाज के विकास को ही ध्यान में रखते हुए राज्य को सामाजिक एवं पारिवारिक संबंधों की व्यवस्था एवं रक्षा करनी चाहिए। यही कारण है कि कौटिल्य ने अपने ग्रंथ अर्थशास्त्र में निर्धन व्यक्तियों एवं दीन दुखियों की सहायता करने पर विशेष बल दिया है। शिक्षा के विकास के संबंध में कौटिल्य का मत यह कहा है कि राज्य को चाहिए कि वह इस दिशा में विशेष रूप से ध्यान दें। इसके लिए इस विद्वान ने ब्राह्मणों को पर्याप्त सहायता एवं शिक्षा अनुदान देने का सुझाव रखा है।

राज्य में उचित शिक्षा व्यवस्था करने के नाते एक शासक का यह कर्तव्य हो जाता है कि वह इस बात का निरीक्षण करे कि पति पत्नी, पिता-पुत्र, गुरु शिष्य अथवा भाई बहन सभी अपने अपने दायित्वों का भली-भांति पालन कर रहे हैं अथवा नहीं। वृद्ध मनुष्यों अपाहिजों तथा रोगियों के जीवन रक्षा का भार भी राज्य द्वारा वहन(afford) किया जाना चाहिए। कौटिल्य ने समाज में विवाह एवं वैवाहिक संबंध विच्छेद के विषय में भी नियम बताए हैं। उन्होंने सामाजिक व्यवस्था को सुचारु रुप से चलाने के उद्देश्य से वैश्याओं को भी कुछ नियमों के अधीन अपना व्यवसाय चलाने की अनुमति प्रदान की है। राज्य के उपयुक्त कार्य के आधार पर हम यह भी कह सकते हैं कि आचार्य कौटिल्य राज्य की लोक कल्याणकारी स्वरुप को लाने की आवश्यकता पर बल देते हैं।